



Original Article

इक्कीसवीं सदी के हिंदी साहित्य तथा सिनेमा में चित्रित शैक्षिक समस्याएँ

प्रो. अनिल अर्जुन अहिवाले

प्रोफेसर एवं अध्यक्ष हिंदी विभाग

श्रीपतराव कदम महाविद्यालय, शिरवल. तह-खंडाला. जिला-सतारा

Manuscript ID:

IJAAR-C130303

ISSN: 2347-7075

Impact Factor – 8.141

Volume - 13

Issue - 3

January – February 2026

Pp. 11- 14

Submitted: 12 Jan.2026

Revised: 21 Jan. 2026

Accepted: 10 Feb 2026

Published: 10 Feb. 2026

Corresponding Author:

प्रो. अनिल अर्जुन अहिवाले

Quick Response Code:



Website: <https://ijaar.co.in/>



DOI: 10.5281/zenodo.22774564

DOI Link:

<https://doi.org/10.5281/zenodo.22774564>



Creative Commons



सार:

इक्कीसवीं सदी में शिक्षा को सामाजिक परिवर्तन और विकास का सबसे प्रभावी माध्यम माना जाता है, किंतु व्यवहारिक स्तर पर शिक्षा व्यवस्था अनेक गंभीर समस्याओं से जूझ रही है। वैश्वीकरण, निजीकरण, तकनीकी विकास और बढ़ती प्रतिस्पर्धा ने शिक्षा के स्वरूप और उद्देश्य दोनों को प्रभावित किया है। हिंदी साहित्य और सिनेमा, जो समाज की चेतना और संवेदना के सशक्त माध्यम हैं, इन शैक्षिक समस्याओं को यथार्थवादी और आलोचनात्मक दृष्टि से प्रस्तुत करते हैं। यह शोधलेख इक्कीसवीं सदी के हिंदी साहित्य तथा सिनेमा में चित्रित प्रमुख शैक्षिक समस्याओं—जैसे शिक्षा का बाजारीकरण, रटत शिक्षा प्रणाली, छात्रों पर मानसिक दबाव, सामाजिक असमानता, बेरोजगारी तथा नैतिक मूल्यों के हास—का विश्लेषण करता है। अध्ययन से यह स्पष्ट होता है कि साहित्य और सिनेमा न केवल शिक्षा व्यवस्था की विफलताओं को उजागर करते हैं, बल्कि एक मानवीय, समावेशी और मूल्यपरक शिक्षा की आवश्यकता पर भी बल देते हैं।

मुख्य शब्द: इक्कीसवीं सदी, हिंदी साहित्य, हिंदी सिनेमा, शिक्षा व्यवस्था, शैक्षिक समस्याएँ, बाजारीकरण

Creative Commons (CC BY-NC-SA 4.0)

This is an open access journal, and articles are distributed under the terms of the Creative Commons Attribution-NonCommercial-ShareAlike 4.0 International License (CC BY-NC-SA 4.0), which permits others to remix, adapt, and build upon the work non-commercially, provided that appropriate credit is given and that any new creations are licensed under identical terms.

How to cite this article:

प्रो. अनिल अर्जुन अहिवाले. (2026). इक्कीसवीं सदी के हिंदी साहित्य तथा सिनेमा में चित्रित शैक्षिक समस्याएँ. *International Journal of Advance and Applied Research*, 13(3), 11–14. <https://doi.org/10.5281/zenodo.22774564>

प्रस्तावना:

इक्कीसवीं सदी को ज्ञान, सूचना और तकनीक की सदी कहा जाता है। इस युग में शिक्षा को व्यक्ति के सर्वांगीण विकास, सामाजिक गतिशीलता और राष्ट्रीय प्रगति का मूल आधार माना गया है। परंतु वास्तविकता यह है कि शिक्षा

व्यवस्था आज अनेक प्रकार के संकटों से घिरी हुई है। बढ़ती जनसंख्या, सीमित संसाधन, बढ़ती प्रतिस्पर्धा, बेरोजगारी और सामाजिक विषमता ने शिक्षा के उद्देश्य को जटिल बना दिया है। वैश्वीकरण और निजीकरण की प्रक्रियाओं ने शिक्षा को अवसरों के साथ-साथ नए अंतर्विरोध भी प्रदान किए हैं। शिक्षा अब



केवल ज्ञान प्राप्ति का साधन नहीं रही, बल्कि सामाजिक प्रतिष्ठा, आर्थिक सुरक्षा और सफलता की अनिवार्य शर्त बन गई है।

हिंदी साहित्य और सिनेमा समकालीन समाज के सशक्त अभिव्यक्तिक माध्यम हैं। ये दोनों न केवल समाज की समस्याओं को उजागर करते हैं, बल्कि उनके सामाजिक और मानसिक प्रभावों का भी विश्लेषण करते हैं। इक्कीसवीं सदी के हिंदी साहित्य और सिनेमा में शिक्षा से जुड़ी समस्याएँ एक केंद्रीय विषय के रूप में उभरती हैं। छात्र जीवन, शिक्षक-छात्र संबंध, शिक्षा संस्थानों की संरचना और शिक्षा का सामाजिक प्रभाव—इन सभी पक्षों को रचनाकारों और फ़िल्मकारों ने गंभीरता से प्रस्तुत किया है, जिससे शिक्षा और समाज के अंतर्संबंधों की गहन समझ विकसित होती है।

शिक्षा का बाज़ारीकरण और निजीकरण:

इक्कीसवीं सदी की शिक्षा व्यवस्था की सबसे गंभीर समस्या शिक्षा का बाज़ारीकरण है। आज शिक्षा सेवा न रहकर एक लाभकारी उद्योग बन चुकी है। निजी विद्यालयों, मंहंगे कॉलेजों और कोचिंग संस्थानों का बढ़ता वर्चस्व शिक्षा को आमजन की पहुँच से दूर कर रहा है। हिंदी साहित्य और सिनेमा दोनों में यह तथ्य प्रमुखता से उभरता है कि शिक्षा में धन और संसाधनों की भूमिका निर्णायक होती जा रही है।

हिंदी सिनेमा में श्री इंडियट्स जैसी फ़िल्म शिक्षा संस्थानों की यांत्रिक और अमानवीय प्रकृति को उजागर करती है, जहाँ सफलता का मापदंड केवल अंक, रैंक और पैकेज बन जाता है। शिक्षा का उद्देश्य ज्ञान और विवेक विकसित करना न रहकर आर्थिक लाभ तक सीमित हो जाता है। हिंदी साहित्य में भी शिक्षा के इस व्यावसायिक स्वरूप की आलोचना मिलती है, जहाँ योग्य किंतु गरीब छात्र अवसरों से वंचित रह जाते हैं।

यह स्थिति शिक्षा के लोकतांत्रिक और समावेशी चरित्र को कमजोर करती है।

रटंत शिक्षा प्रणाली और रचनात्मकता का दमन:

इक्कीसवीं सदी की शिक्षा प्रणाली में रटंत विद्या और परीक्षा-केंद्रित दृष्टिकोण एक प्रमुख समस्या के रूप में सामने आता है। हिंदी साहित्य और सिनेमा में ऐसे छात्र पात्र बार-बार दिखाई देते हैं, जो अंकों की दौड़ में अपनी रुचि, कल्पनाशीलता और रचनात्मकता खो बैठते हैं। शिक्षा संस्थान छात्रों को प्रश्न पूछने और आलोचनात्मक चिंतन के लिए प्रोत्साहित करने के बजाय केवल निर्धारित पाठ्यक्रम और उत्तर रटने तक सीमित कर देते हैं।

हिंदी सिनेमा में छात्र जीवन को निरंतर तनाव, भय और असफलता की आशंका से घिरा हुआ दिखाया गया है। यह व्यवस्था छात्रों को आत्मविश्वासी नागरिक बनाने के बजाय आज्ञाकारी और यांत्रिक व्यक्ति के रूप में ढालती है। हिंदी साहित्य में भी शिक्षा की इस यांत्रिक प्रक्रिया पर तीखी टिप्पणी मिलती है, जहाँ छात्र की मौलिक पहचान दब जाती है। यह स्थिति शिक्षा के बौद्धिक और सृजनात्मक उद्देश्य के विरुद्ध जाती है।

छात्रों पर मानसिक दबाव और आत्महत्या की समस्या:

इक्कीसवीं सदी में शिक्षा से जुड़ी सबसे चिंताजनक समस्या छात्रों में बढ़ता मानसिक तनाव है। परीक्षा, प्रतियोगिता, अभिभावकों की अपेक्षाएँ और सामाजिक तुलना छात्रों पर असहनीय दबाव डालती हैं। हिंदी सिनेमा और साहित्य दोनों में यह समस्या अत्यंत संवेदनशील ढंग से प्रस्तुत की गई है।

फ़िल्मों में छात्र आत्महत्या, अवसाद और असफलता के भय जैसे विषयों का चित्रण यह दर्शाता है कि शिक्षा



जीवनदायिनी होने के बजाय कई बार जीवनघातक बन जाती है। हिंदी साहित्य में भी छात्र पात्र मानसिक कुंठा, अकेलेपन और आत्मग्लानि से जूझते दिखाई देते हैं। यह चित्रण शिक्षा व्यवस्था की मानवीय विफलता को उजागर करता है, जहाँ छात्र के मानसिक स्वास्थ्य की अनदेखी की जाती है।

सामाजिक असमानता और शिक्षा:

इक्कीसवीं सदी में शिक्षा के क्षेत्र में सामाजिक और वर्गीय असमानता एक गहरी समस्या बनी हुई है। हिंदी साहित्य विशेष रूप से ग्रामीण, दलित और वंचित वर्गों की शैक्षिक समस्याओं को उजागर करता है। शहरी क्षेत्रों में जहाँ आधुनिक विद्यालय, तकनीक और संसाधन उपलब्ध हैं, वहीं ग्रामीण क्षेत्रों में आज भी विद्यालयों की कमी, शिक्षकों का अभाव और बुनियादी सुविधाओं की कमी देखने को मिलती है।

हिंदी सिनेमा में भी संसाधनों के अभाव में संघर्षरत प्रतिभाशाली छात्रों का चित्रण मिलता है। यह असमानता शिक्षा को सामाजिक न्याय का साधन बनाने के बजाय सामाजिक विभाजन को और गहरा करती है। साहित्य और सिनेमा इस स्थिति को सामाजिक व्यवस्था की विफलता के रूप में प्रस्तुत करते हैं।

शिक्षा और बेरोज़गारी का संकट:

इक्कीसवीं सदी में शिक्षा और रोजगार के बीच बढ़ता अंतर एक गंभीर समस्या है। हिंदी साहित्य और सिनेमा में शिक्षित युवाओं की बेरोज़गारी, अस्थायी नौकरियाँ और भविष्य की अनिश्चितता को प्रमुखता से दिखाया गया है। उच्च शिक्षा प्राप्त करने के बावजूद रोजगार न मिलना युवाओं में निराशा और मोहभंग को जन्म देता है।

यह स्थिति शिक्षा की प्रासंगिकता पर प्रश्नचिह्न लगाती है। हिंदी साहित्य में शिक्षित युवा वर्ग का संघर्ष यह दर्शाता है कि शिक्षा सामाजिक सशक्तिकरण के बजाय कई बार हताशा का कारण बन जाती है।

नैतिक शिक्षा और मूल्यों का हास:

इक्कीसवीं सदी की शिक्षा व्यवस्था में नैतिक और मानवीय मूल्यों का हास भी एक महत्वपूर्ण समस्या है। हिंदी साहित्य और सिनेमा दोनों यह संकेत देते हैं कि शिक्षा केवल करियर और आर्थिक सफलता तक सीमित हो गई है। ईमानदारी, सामाजिक जिम्मेदारी, सहानुभूति और नैतिकता जैसे मूल्य शिक्षा से धीरे-धीरे बाहर होते जा रहे हैं। साहित्य इस स्थिति पर गहरी चिंता व्यक्त करता है और शिक्षा को मूल्यपरक बनाने की आवश्यकता पर बल देता है। सिनेमा भी प्रेरणादायक शिक्षकों और छात्रों के माध्यम से मानवीय शिक्षा की आवश्यकता को रेखांकित करता है।

निष्कर्ष

इक्कीसवीं सदी के हिंदी साहित्य और सिनेमा में चित्रित शैक्षिक समस्याएँ समकालीन समाज की वास्तविकताओं का सशक्त प्रतिबिंब हैं। शिक्षा का बाज़ारीकरण, रटत प्रणाली, मानसिक दबाव, सामाजिक असमानता, बेरोज़गारी और नैतिक मूल्यों का हास—ये सभी समस्याएँ शिक्षा व्यवस्था की गंभीर कमियों को उजागर करती हैं।

हिंदी साहित्य और सिनेमा केवल इन समस्याओं की आलोचना नहीं करते, बल्कि एक वैकल्पिक दृष्टि भी प्रस्तुत करते हैं—ऐसी शिक्षा की कल्पना, जो मानवीय, समावेशी, रचनात्मक और मूल्यपरक हो। इस प्रकार ये दोनों माध्यम शिक्षा



सुधार और सामाजिक चेतना के निर्माण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।

संदर्भ:

1. सिनेमा और फिल्मांतरित हिंदी साहित्य- विकास प्रकाशन, कानपुर
2. फिल्में और संस्कृति- प्रभात प्रकाशन, दिल्ली
3. हिंदी सिनेमा एक अध्ययन- तक्षशिला प्रकाशन, दिल्ली
4. हिंदी सिनेमा के बहुरंग- तक्षशिला प्रकाशन, दिल्ली
5. लोकप्रिय सिनेमा और सामाजिक यथार्थ- अनामिका पब्लिशर्स, दिल्ली
6. सिनेमा कल-आज-कल- वाणी प्रकाशन, दिल्ली
7. हिंदी सिनेमा- बीसवीं से इक्कीसवीं सदी तक-साहित्य भण्डार, इलाहाबाद
8. सिनेमा की सोच- वाणी प्रकाशन, दिल्ली
9. सिनेमा और समकालीन सिनेमा- वाणी प्रकाशन, दिल्ली
10. सिनेमा और संस्कृति- वाणी प्रकाशन, दिल्ली
11. सिनेमा और समाज, दिल्ली साहित्य प्रकाशन
12. आज का सिनेमा- नीलकंठ प्रकाशन, दिल्ली
13. हिंदी सिनेमा का इतिहास- मनमोहन चंडा
14. सिनेमा की संवेदना-प्रतिभा प्रतिष्ठान, नई दिल्ली
15. हिन्दी सिनेमा और समाज: युग संदर्भ- नटराज प्रकाशन
16. हिंदी सिनेमा और उसका अध्ययन- नटराज प्रकाशन